राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ

एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 4344/2015

बृज मोहन **गुप्ता** पुत्र स्वर्गीय श्री बद्री प्रसाद गुप्ता, 272, राजेंद्र नगर, भरतपुर **राजस्थान।**

----**याचिकाकर्ता**

बनाम

1. **केनरा बैंक अपने महाप्रबंधक**, एचआर विंग, **प्रधान कार्यालय**, 112, जे.सी. रोड, **बैंगलोर के माध्यम से।**
2. उप-**महाप्रबंधक**, मानव संसाधन विंग, **प्रधान कार्यालय**, 112, जे.सी. रोड, बैंगलोर।
3. **सहायक महाप्रबंधक, केनरा बैंक एचआरएम अनुभाग**, सर्किल कार्यालय, 1-2 **ऑर्बिट** मॉल, अजमेर रोड, जयपुर।

----**प्रत्यर्थीगण**

याचिकाकर्ता गण की ओर से	:	**श्री विज्ञान शाह**, अधिवक्ता, **श्री कमलेश शर्मा**, **अधिवक्ता श्री अक्षित गुप्ता**, **अधिवक्ता श्री** पुखराज चावला, **अधिवक्ता सुश्री प्रज्ञा सेठ**, **अधिवक्ता** सुश्री सारा शर्मा, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी (गण) की ओर से	:	सुश्री अनिता अग्रवाल, अधिवक्ता। श्री लक्ष्मीकांत **अधिवक्ता** के साथ। श्री **विकास** सोनी, अधिवक्ता। श्री **विशाल** करनानी, अधिवक्ता। श्री संजय कुमार गुप्ता, अधिकारी, केनरा **बैंक** श्री अभिनव वशिष्ठ, अधिकारी, केनरा बैंक

माननीय न्यायमूर्ति समीर जैन

<u>निर्णय</u>

<u>रिपोर्टेबल</u>

<u>निर्णय सुरक्षित करने की तारीख</u> : **01.07.2022**

निर्णय उच्चारित करने की तारीख : **29.07.2022**

1. वर्तमान रिट याचिका दिनांक 31.03.2014 के समाप्ति आदेश से व्यथित होकर दायर की गई है जिसके द्वारा याचिकाकर्ता को आरोप-पत्र दिनांक 09.01.2013 के मद्देनजर सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था। यह भी नोट किया गया है कि उक्त बर्खास्तगी आदेश के विरुद्ध एक अपील दायर की गई थी और उसे अपीलीय प्राधिकारी ने दिनांक 31.01.2014 के आदेश के तहत अपास्त कर दिया था। याचिकाकर्ता द्वारा दायर समीक्षा आवेदन को भी दिनांक 29.11.2014 के आदेश द्वारा अपास्त कर दिया गया था और इसलिए याचिकाकर्ता द्वारा वर्तमान रिट याचिका दायर की गई है।

2. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि याचिकाकर्ता को नियमित चयन के माध्यम से मूल रिक्ति के विरुद्ध प्रत्यर्थी-बैंक में क्लर्क के पद पर 01.05.1984 को नियुक्त किया गया था। उन्हें 02.04.2005 को जूनियर मैनेजर ग्रेड-1 के रूप में पदोन्नत किया गया था। मामले में कारण और विवाद तब उत्पन्न हुआ जब 21.12.2012 को, जब याचिकाकर्ता प्रत्यर्थी-बैंक की करौली शाखा में एक अधिकारी के रूप में कार्यरत था, उसे अनुशासनात्मक कार्यवाही और दिनांक 08.02.2013 को जारी कारण बताओ नोटिस (एससीएन) के तहत निलंबित कर दिया गया, जो उसे कुछ खातों के संबंध में शाखा के अग्रिम पोर्टफोलियो में देखी गई कुछ अनियमितताओं के संबंध में जारी किया गया था।

3. उक्त एससीएन के उत्तर में, याचिकाकर्ता ने 18.03.2013 को अपने विरुद्ध लगाए गए प्रत्येक आरोप का खंडन करते हुए एक विस्तृत उत्तर प्रस्तुत किया। यह बताया गया है कि करौली शाखा एक छोटी शाखा थी जिसमें केवल तीन कर्मचारी थे; एक प्रबंधक, याचिकाकर्ता स्वयं और एक चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी, जिसमें याचिकाकर्ता कैश और रिपोर्ट अनुभाग को संभालने के कर्तव्यों का निर्वहन कर रहा था, और केवल प्रबंधक द्वारा दिए गए निर्देशों पर प्रविष्टियां करता था। उसे केनरा बैंक अधिकारी कर्मचारी (अनुशासन और अपील) विनियम, 1976 (संक्षेप में 'अनुशासन विनियम 1976') के विनियम 6 के तहत केनरा बैंक अधिकारी कर्मचारी (आचरण) का विनियम 24 विनियमन, 1976 (संक्षेप में 'आचरण विनियमन 1976') विनियम 3(1) के उल्लंघन के लिए आक्षेपित आरोप-पत्र (अनुलग्नक-4) जारी और तामील किया गया था जिसमें प्रबंधक श्री बैरवा के साथ मिलीभगत के आरोपों के साथ-साथ

दुर्भावनापूर्ण, कदाचार, प्राधिकरण के साथ बेईमानी के आरोप निर्दिष्ट किए गए थे।

4. उक्त आरोप-पत्र के प्रत्युत्तर में दिनांक 04.09.2013 को एक उत्तर प्रस्तुत किया गया तथा लगाये गये आरोपों का पूर्णतः खण्डन किया गया। 31.01.2014 को, अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने उक्त आरोप-पत्र के उत्तर पर विचार करने के बाद, अनुशासनात्मक विनियमन 1976 के विनियमन 4 (ञ) के तहत सेवाओं से बर्खास्तगी की सजा का आदेश जारी किया। उसी के विरुद्ध, एक अपील दायर की गई थी और उसे आदेश दिनांक 14.08.2014 द्वारा अपास्त कर दिया गया। इसके बाद, दिनांक 29.11.2014 के आदेश के तहत आरोप-पत्र के अनुसरण में पारित मूल आदेश पर विचार करने के बाद समीक्षा प्राधिकारी द्वारा समीक्षा आवेदन को भी अपास्त कर दिया गया था।

5. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि एक अधिकारी के रूप में कार्य करते हुए, याचिकाकर्ता ने प्रबंधक-श्री बैरवा के निर्देशों पर अपने कर्तव्यों का पालन किया था। उक्त निर्देश पर उन्होंने प्रबंधक के परिवार के सदस्यों के पक्ष में कुछ प्रविष्टियाँ दर्ज की थीं। उक्त प्रविष्टियों से याचिकाकर्ता को कोई लाभ नहीं हुआ और न ही उक्त प्रविष्टियों से याचिकाकर्ता को कोई व्यक्तिगत लाभ हुआ है। यह भी बताया गया है कि प्रबंधक, श्री बी.एल. बैरवा ने याचिकाकर्ता के ट्रेलर पासवर्ड का दुरुपयोग करके आरोप-पत्र में लगाई गई सभी फर्जी प्रविष्टियाँ कीं और गबन की गई पूरी राशि का उपयोग विशेष रूप से अपने लाभ के लिए किया।

6. याचिकाकर्ता ने अपनी पत्नी और बच्चों के नाम पर बचत बैंक खाते खोलने की बात स्वीकार की है, हालांकि उसका कहना है कि उसने कोई धोखाधड़ी वाला लेनदेन नहीं किया है जिससे उसे लाभ हुआ हो, या उनके परिवार के किसी सदस्य को, कोई व्यक्तिगत/व्यक्तिगत लाभ प्राप्त हुआ हो। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, आरोप-पत्र में बैंक को हुए किसी नुकसान का कोई उल्लेख नहीं है, न ही याचिकाकर्ता को किसी मात्रात्मक नुकसान के लिए जिम्मेदार ठहराया गया है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि प्रबंधक ने अपनी ओर से गलती/कदाचार को स्वीकार कर लिया है और पूरी राशि लगभग 9.65 लाख रुपये जमा कर दी है, जो याचिकाकर्तागण की प्रामाणिकता को दर्शाता है।

7. याचिकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि प्रत्यर्थी-बैंक ने तथ्यों के एक ही सेट पर **17.12.2013** को एफआईआर दर्ज की थी, जिसमें तथ्यों और परिस्थितियों के एक ही सेट पर उचित जांच के बाद एक चालान और अंतिम रिपोर्ट भरी गई थी, जिसमें कथित में याचिकाकर्ता की भूमिका थी, लेकिन किसी भी लेन-देन से इनकार कर दिया गया था और उन्हें दोषमुक्त कर दिया गया था और इसमें एकमात्र दायित्व और गलती शाखा प्रबंधक, श्री बनवारी लाल बैरवा की थी। विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि यह कानून की स्थापित स्थिति है कि यदि तथ्यों और परिस्थितियों के एक ही सेट पर, आपराधिक कार्यवाही को रद्द कर दिया जाता है और चलने योग्य नहीं माना जाता है, तो सिविल कार्यवाही शुरू नहीं की जा सकती और/या जारी नहीं रखी जा सकती है, जिसके लिए उन्होंने कहा है **एच.एल. गुलाटी बनाम यूनियन ऑफ इंडिया (यूओआई) एवं अन्य, 2015 (12) एससीसी** 408 में रिपोर्ट किया गया, पर भरोसा जताया है।

8. विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि कदाचार और लापरवाही के बीच अंतर है। मौजूदा मामले में, अपने तर्क पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उन्होंने कहा कि याचिकाकर्ता के कार्यों को लापरवाही का मामला माना जा सकता है क्योंकि याचिकाकर्ता ने केवल अपने परिवार के सदस्यों के नाम पर खाते खोले हैं, लेकिन गबन का कोई कार्य नहीं किया है। न ही उसने अपने पक्ष में या अपने परिवार के सदस्यों के पक्ष में कोई लाभ उठाया है। यह तर्क दिया गया कि लापरवाही के ऐसे कृत्य के लिए, बर्खास्तगी की कड़ी सजा न तो उचित है और न ही विधिक रूप से न्याय हित के अनुरूप है। मामले में बैंक को कोई नुकसान नहीं हुआ क्योंकि सारा पैसा महाप्रबंधक द्वारा स्वयं अपनी ओर से कदाचार स्वीकार करने के बाद जमा किया गया। इस प्रकार, बैंक को कोई नुकसान नहीं हुआ और इसलिए उनका कहना है कि कानून की तय स्थिति के अनुसार, जैसा कि **कैलाश नाथ गुप्ता बनाम जांच अधिकारी**, (**आर.के.राय**), **इलाहाबाद बैंक और अन्य 2003 (9) एससीसी 480** में रिपोर्ट किया गया, में माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहा था, आनुपातिकता के सिद्धांत का पालन किया जाना चाहिए और इसलिए उनके मामले में बर्खास्तगी की सजा उनके विरुद्ध लगाए गए आरोपों के लिए बेहद असंगत है, खासकर जब तथ्यों और परिस्थितियों के समान सेट के लिए आपराधिक कार्यवाही में, वह दोषमुक्त कर दिया गया है और प्रत्यर्थी-बैंक ने इसके विरुद्ध कोई अपील दायर नहीं की है।

9. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने **इंस्पेक्टर प्रेम चंद बनाम एनसीटी दिल्ली सरकार एवं अन्य, 2007(4) एससीसी 566** में रिपोर्ट किया गया, **रूप सिंह नेगी बनाम पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य, 2009(2) एससीसी 570** में रिपोर्ट किया गया, **नरिंदर मोहन आर्य बनाम यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड एवं अन्य, 2006 (4) एससीसी 713** में रिपोर्ट किया गया, में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों पर भी भरोसा किया है। विद्वान अधिवक्ता ने 'लैप्स' शब्द की परिभाषा के लिए वेबस्टर डिक्शनरी पर भरोसा किया है। उन्होंने बताया है कि 'चूक'/'लापरवाही' कदाचार से अलग है। विद्वान अधिवक्ता ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया बनाम विश्वासनाथ भट्टाचार्जी,** 2022 **एससीसी ऑनलाइन एससी** 108 में रिपोर्ट किया गया, में दिए गए निर्णय पर भरोसा किया और तर्क दिया कि इस समान मामले में यह माना गया था कि मामला लापरवाही का है, कदाचार का नहीं और इसलिए, कर्मचारी को आनुपातिक दंड/उपचार दिया जाना चाहिए, न कि उच्च परिमाण का बर्खास्तगी का दंड। अंत में, विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि जब एक बार तथ्यों के एक ही सेट पर आपराधिक कार्यवाही में, कार्यवाही रद्द कर दी गई है, इसे सिविल या सेवा कानून के तहत न तो शुरू किया जा सकता है और न ही जारी रखा जा सकता है।

10. *इसके विपरीत,* प्रत्यर्थी-बैंक की विद्वान अधिवक्ता, सुश्री अनीता अग्रवाल ने कहा कि याचिकाकर्ता ने यह स्वीकार किया है कि उसने अपना गोपनीय पासवर्ड बैंक प्रबंधक, श्री बी.एल. बैरवा के साथ साझा किया था और 9.65 लाख रुपये की राशि का दुरुपयोग किया गया और उसे विभिन्न खातों में भेज दिया गया जो उस पैसे के पात्र नहीं थे। यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता ने जीएल और एलसीसीआर प्रमुखों से अनाधिकृत रूप से डेबिट करके अपने आधिकारिक पद का दुरुपयोग किया, जिससे प्रत्यर्थी-बैंक को भारी वित्तीय नुकसान हुआ। याचिकाकर्ता के उपरोक्त कृत्यों ने उसकी ईमानदारी और सत्यनिष्ठा पर बड़े प्रश्न उठाए, जिससे प्रत्यर्थी बैंक की प्रतिष्ठा को भी नुकसान हुआ। इसलिए, याचिकाकर्ता के विरुद्ध आचरण विनियम 1976 के विनियम 24 के साथ पठित विनियम 3(1) के अधीन उल्लंघन के आरोप लगाए गए और विशिष्ट आरोपों के साथ दिनांक 09.08.2013 को एक आरोप-पत्र जारी किया गया। विद्वान अधिवक्ता ने इस बात पर जोर दिया कि प्रत्यर्थी बैंक ने याचिकाकर्ता को सुनवाई के सभी उचित अवसर दिए और उसकी प्रतिक्रिया/बचाव पर विचार करने के बाद ही इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि याचिकाकर्ता ओसीसी/केसीसी/डायरी

ऋण/किसान सुविधा/एएएलएचवी केनरा मोबाइल ऋण की आय के दुरुपयोग में शामिल होने के लिए दोषी था जिसका उससे शाखा में मूल्यांकन/अनुशंसा की थी और करौली शाखा में अपने कार्यकाल के दौरान जीएल और एलसीसीआर प्रमुखों से अनाधिकृत रूप से डेबिट करके अपने आधिकारिक पद का दुरुपयोग किया और लेनदेन को विलय करके और विभिन्न खातों में क्रेडिट देकर पैसे निकाल लिए गए जबकि वह उस पैसे का पात्र नहीं था। यह माना गया कि याचिकाकर्ता की हरकतें प्रामाणिक नहीं थीं और क्योंकि लेनदेन वास्तविक सामान्य बैंकिंग लेनदेन नहीं थे, याचिकाकर्ता को अनुशासन विनियम 1976 के विनियम 4(ञ) के तहत सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था।

11. विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि याचिकाकर्ता के कार्यों को 'कदाचार' के रूप में माना जाता है न कि 'लापरवाही' क्योंकि घोटाले की अवधि 06.06.2010 से 21.12.2012 के बीच वितरित की गई थी, जो कि ढाई वर्ष की अवधि है। अलग-अलग तारीखों में अलग-अलग बैंक खातों में गलत इरादे से धन का अंतरण किया गया। विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि आरोप संख्या 3 के अनुसार, अधिकारी/याचिकाकर्ता ने परिवार के सदस्यों के नाम पर बचत खाते खोले और आचरण विनियम, 1976 के विनियम 15(i), 15(iv) और 20(4) के अधिदेश के अनुसार उसने इन खातों में किए गए लेनदेन की रिपोर्ट नियंत्रण अधिकारी को नहीं दी, जिससे संकेत मिलता है कि वह बेईमानी के साथ तथा ईमानदारी और भक्ति के बिना अपने कर्तव्यों का निर्वहन कर रहा था। विद्वान अधिवक्ता ने आरोप के अनुच्छेद-III पर भरोसा किया है, जिसमें याचिकाकर्ता ने अपनी पत्नी (श्रीमती मंजू गुप्ता), बेटे (मयंक गोयल) और बेटी (सुश्री महक गोयल) के नाम पर बैंक खाते खोले, जिसमें कई लेनदेन शामिल थे। बैंक को सूचित किए बिना रकम निकाली गई, जो गंभीर कदाचार है और जिसके लिए बड़े दंड का प्रावधान है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि मामले पर विचार करने के बाद, मूल प्राधिकारी, अपीलीय प्राधिकारी और समीक्षा प्राधिकारी ने मौखिक आदेशों में, छठे आरोप को छोड़कर, जो आधा सिद्ध हुआ था, आरोप-पत्र में याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाए गए सभी आरोपों की पुष्टि की है। यह बताया गया कि सिद्ध आरोपों के मद्देनजर, बैंक के पास आत्मविश्वास की उचित कमी होने के सभी कारण हैं, जो निष्पादित कर्तव्यों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए बैंक के हित में इसे समाप्त करना आवश्यक बनाते हैं। याचिकाकर्ता की सेवाओं पर "बर्खास्तगी" का दंड लगाया जाएगा जो भविष्य में उसके रोजगार के लिए अयोग्यता होगी।

12. समान तथ्यों और परिस्थितियों पर आपराधिक कार्यवाही के संबंध में, यह कहा गया है कि विभागीय जांच दिनांक 09.08.2003 के आरोप-पत्र के आधार पर शुरू की गई थी, और आरोप-पत्र में निहित आरोपों पर कभी भी आपराधिक कार्यवाही में विचार/पूछताछ नहीं की गई थी। प्रत्यर्थी बैंक ने आरोप-पत्र में उल्लिखित विशिष्ट आरोपों के लिए बैंक के नियमों और विनियमों के अनुसार याचिकाकर्ता के विरुद्ध विभागीय कार्यवाही शुरू की थी और जिसके लिए विशिष्ट सजा/दंड भी निर्धारित हैं। प्रत्यर्थी बैंक आपराधिक मामले से पूरी तरह स्वतंत्र होकर आगे बढ़ा है और आंतरिक जांच के दौरान सामने आए साक्ष्यों के आधार पर आरोपों को सिद्ध किया है। हालाँकि याचिकाकर्ता को बरी कर दिया गया था, लेकिन इन तथ्यों पर कि उसने गोपनीय पासवर्ड साझा करने की बात स्वीकार की थी और उसने अपने परिवार के सदस्यों के नाम पर बचत खाता खोला था, आपराधिक कार्यवाही में विचार नहीं किया गया था। उपरोक्त के आलोक में, यह तर्क दिया गया है कि वर्तमान मामले में कानून और तथ्यों पर समान परिस्थितियों का तर्क नहीं दिया गया है। विद्वान अधिवक्ता ने **यूनाइटेड कमर्शियल बैंक के अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक और अन्य बनाम पी.सी. कक्कड़ ने (2003) 4 एससीसी 364** में रिपोर्ट किया गया, के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा जताया है और तर्क दिया कि ऐसे मामलों में जहां दो कार्यवाही अलग-अलग संदर्भ में हैं और सेवा मामलों में अलग-अलग कानूनों पर निर्भरता भी है, भले ही बैंक को कोई नुकसान न हो और आपराधिक मामला बंद हो जाए। यह आरोपी के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने पर रोक नहीं हो सकता है। विद्वान अधिवक्ता ने यह भी कहा है कि याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णय उपरोक्त के लिए प्रासंगिक नहीं हैं कारण, विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि इस मामले में, छोटी शाखा में केवल दो बैंक कर्मचारी थे, जिन्होंने धन का दुरुपयोग किया, बेईमानी से काम किया, न केवल बैंक/नियोक्ता के साथ विश्वास का उल्लंघन किया, बल्कि लंबे समय तक ग्राहकों के साथ भी धोखाधड़ी की। ढाई वर्ष की अवधि, इसलिए, यह महज लापरवाही का मामला नहीं है और नियमों के मुताबिक इसमें बड़े दंड की जरूरत है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि कानून की स्थापित स्थिति के अनुसार, समवर्ती खोज और स्पष्ट आदेशों के मामले में, माननीय न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत न्यायिक समीक्षा के लिए याचिकाओं पर विचार करने में धीमी गति से काम करना चाहिए, सिवाय इसके कि जब कोई गंभीर मामला हो, त्रुटि, रिकार्ड में स्पष्ट त्रुटि या

न्याय की विफलता हुई हो।

13. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना, याचिका के रिकॉर्ड को स्कैन किया और बार में उद्धृत निर्णयों पर विचार किया।

14. सभी तथ्यों पर विचार करने पर, यह पाया गया कि मौजूदा मामले में, प्रबंधक श्री बैरवा और याचिकाकर्ता करौली शाखा में एकमात्र सफेदपोश कर्मचारी थे। इस न्यायालय का मानना है कि लेनदेन वास्तविक सामान्य बैंकिंग लेनदेन नहीं थे, उन्हें दुर्भावनापूर्ण तरीके से किया गया था और लेनदेन को विलय करके और उस पैसे के लिए पात्र नहीं होने वाले विभिन्न खातों में क्रेडिट देकर पैसे की हेराफेरी की गई थी। याचिकाकर्ता ने स्वीकार किया कि उसने बैंक के मानदंडों और दिशानिर्देशों के विरुद्ध अपना गोपनीय पासवर्ड प्रबंधक के साथ साझा किया था, और धोखाधड़ी वाले लेनदेन की यह प्रक्रिया 2 वर्ष से अधिक की अवधि तक जारी रही और लेन-देन की प्रकृति से पूरी तरह से अवगत होने के बावजूद याचिकाकर्ता ने कभी भी अपना पासवर्ड नहीं बदला। इस तरह के कृत्य को महज लापरवाही नहीं माना जा सकता, इसका सीधा सा कारण यह है कि ऐसा सिर्फ एक या दो बार ही नहीं किया गया लेकिन यह कृत्य याचिकाकर्ता की जानकारी में आनुपातिक तरीके से पूरी अवधि के दौरान जारी रहा। आरोप-पत्र और आक्षेपित आदेशों से यह भी परिलक्षित होता है कि याचिकाकर्ता ने अपने नाम के साथ-साथ अपनी पत्नी श्रीमती मंजू गुप्ता, पुत्र श्री मयंक गोयल और पुत्री सुश्री महक गोयल के नाम पर भी बचत बैंक खाते खोले थे और नियंत्रण कार्यालय को सूचित किए बिना शाखा के ग्राहकों/उधारकर्ताओं के साथ अंतर-खाता लेनदेन किया, जिसमें भारी नकद लेनदेन शामिल था, जो आचरण विनियम 1976 के विनियम 15(1), 15(4) और 20(4) के प्रावधानों का स्पष्ट उल्लंघन था और इस तरह न केवल बैंक के विश्वास का उल्लंघन किया बल्कि ग्राहकों के साथ धोखाधड़ी और दुर्भावनापूर्ण तरीके से काम किया। उक्त आरोप अनुशासनात्मक प्राधिकारी, अपीलीय प्राधिकारी के साथ-साथ समीक्षा प्राधिकारी द्वारा सिद्ध पाया गया है। आपराधिक जांच/कार्यवाही में परिवार के सदस्यों के खाते खोलने और बनाए रखने के उक्त तथ्य पर विचार नहीं किया गया, जिसे जल्दबाजी में समाप्त कर दिया गया। किसी भी कारण से, प्रत्यर्थी-बैंक द्वारा इसकी अपील नहीं की गई, जो दुर्भाग्यपूर्ण है।

15. याचिकाकर्ता द्वारा यह भी स्वीकार किया गया है कि उसने अपना गोपनीय पासवर्ड साझा किया है। याचिकाकर्ता का यह तर्क भी गलत है कि पुलिस शिकायत/एफआईआर के साथ-साथ बैंक द्वारा जारी आरोप-पत्र में दिए गए कथन समान हैं। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा अलग-अलग मामले के कानूनों पर रखी गई निर्भरता अलग-अलग है। मौजूदा मामले में, पुलिस विभाग और अनुशासनात्मक प्राधिकारी के समक्ष मामला अलग-अलग प्रावधानों के तहत था। दिनांक 09.08.2013 के आरोप-पत्र में लगाए गए आरोपों पर पुलिस अधिकारियों द्वारा कभी विचार नहीं किया गया, बल्कि उनकी स्वयं की पूछताछ/जांच गलत आधार पर की गई थी।

16. माननीय उच्चतम न्यायालय, सहित निर्णयों की श्रृंखला में **पी.सी. कक्कड़ (सुप्रा.)** ने माना है कि यदि कोई कदाचार है, तो आपराधिक मामले में शून्यता अनुशासनात्मक कार्यवाही में बाधा नहीं बन सकती है, खासकर जब वे अलग-अलग नियमों/विनियमों के तहत अलग-अलग स्तर पर हों और वित्तीय लेनदेन/बैंकिंग के मामले में, आपराधिक मामले में बरी होना कदाचार के आयोग का निर्धारण नहीं करता है। माननीय उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा कि यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा और इसका कोई सार्वभौमिक अनुप्रयोग नहीं होगा। इस संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय के आदेश **पी.सी. कक्कड़ (सुप्रा.)** वर्तमान मामले में काफी मान्य और लागू है।

17. यह भी बार-बार माना जाता है कि न्यायिक समीक्षा और सेवा मामलों में हस्तक्षेप में, विभागीय जांच का दायरा सीमित है और विशेष रूप से अस्वीकार्य है जब आरोप-पत्र, मूल आदेश, अपील में आदेश और समीक्षा आदेश तार्किक निष्कर्ष पर पारित किए जाते हैं और जब वे नैसर्गिक हैं और न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोरने वाले नहीं हैं। वर्तमान मामला दुर्लभतम मामले की श्रेणी में नहीं आता है और चुनौती के तहत दिए गए आक्षेपित आदेशों में कोई स्पष्ट त्रुटि नहीं है। प्रत्यर्थी-बैंक के विद्वान अधिवक्ता का तर्क विचारणीय है क्योंकि दोनों कार्यवाहियों अर्थात अनुशासनात्मक कार्यवाही और आपराधिक कार्यवाही में, आरोप पूरी तरह से अलग और विशिष्ट, स्पष्ट और एक दूसरे से स्वतंत्र थे। माननीय उच्चतम न्यायालय ने **अध्यक्ष-सह-एम.डी., टी.एन.सी.एस. के मामले में निगम लिमिटेड और अन्य बनाम के. मीराबाई, 2006(2) एससीसी 255** में रिपोर्ट किया गया, में माना है कि जब आत्मविश्वास की हानि होती है, तो सहानुभूति या उदारता को आधार नहीं बनाया

जा सकता है। मौजूदा मामले में, प्रत्यर्थी देश का एक अग्रणी बैंक है जिसकी छोटे शहरों में छोटी शाखाएँ हैं। याचिकाकर्ता ने नियमों का उल्लंघन किया है और ऐसा कृत्य किया है जो आचरण विनियम 1976 के विनियम 20 के साथ पठित विनियम 3(1), विनियम 24 और विनियम 15 के तहत कदाचार बनता है जिसके लिए उन्हें सेवाओं से बर्खास्त कर दिया गया था और बर्खास्तगी आदेश मूल प्राधिकारी, अपीलीय प्राधिकारी, समीक्षा प्राधिकारी और अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा अनुमोदित किया गया था। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने सजा की आनुपातिकता और आपराधिक कार्यवाही बंद होने पर अनुशासनात्मक कार्यवाही पर रोक लगाने पर बहस की है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णय ऊपर बताए गए कारणों से कोई सहायता नहीं देते हैं, क्योंकि दोनों कार्यवाही अलग-अलग नियमों के तहत अलग-अलग आधारों और अलग-अलग आरोपों पर और कारणों से की गई थीं। **पी.सी. कक्कड़ (सुप्रा.)** मामले मे माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों में उल्लिखित जो याचिकाकर्ता द्वारा भरोसा किए गए निर्णयों को अलग बनाता है और मौजूदा मामले में लागू नहीं होता है।

18. ऊपर बताए गए कारणों से, इस न्यायालय का मानना है कि यह लापरवाही/चूक का मामला नहीं था, बल्कि आचरण विनियम 1976 के विनियम 24, विनियम 15 और विनियम 20 के साथ पठित विनियम 3 के तहत जानबूझकर दुर्भावनापूर्ण और कदाचार का मामला था जिसके लिए बर्खास्तगी का बड़ा दंड लगाया गया है। इसलिए यह न्यायालय आश्वस्त है कि रिट याचिका अपास्त होने योग्य है और आक्षेपित आरोप-पत्र, अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित मूल आदेश, आक्षेपित अपीलीय आदेश और आक्षेपित समीक्षा आदेश को वैध माना जाता है और इसलिए किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

19. परिणामस्वरूप, रिट याचिका अपास्त की जाती है। सभी लंबित आवेदनों का निपटारा कर दिया गया है।

(समीर जैन), न्यायमूर्ति

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी.के. अग्रवाल द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।